P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-8* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

बहु–ध्रुवीय विश्व के निर्माण में भारत–चीन एवं रूस की भूमिका

सीताराम चौधरी
सह0 आचार्य,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
दूदू, जयपुर

सारांश

विश्व इतिहास के अध्ययन से ज्ञात होता है कि एक शक्तिशाली देश अपने साम्राज्य व शक्ति के विस्तार के लिए तथा वैश्विक राजनीतिक व्यवस्था में अपना वर्चस्व बनाये रखने के लिए के लिए निरन्तर अपनी शक्ति सार्मथ्य में वृद्धि करता रहता है इसके लिए वह विश्व राजनीतिक व्यवस्था को अपने अनुकूल बनाने हेतु साम, दाम, दण्ड, भेद जैसे साधनों का सहयोग लेता है। जिसके उदाहरण विश्व इतिहास में अनेकों देखने को मिलतें है। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान तत्कालीन अनेक महाशक्तियों का पतन हो गया और अन्य तत्कालीन महाशक्तियॉ द्वित्तीय क्रम की महाशक्तियॉ रह गयी जिनमें प्रमुख रूप से फ्रांस, जर्मनी, इग्लैण्ड है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात विश्व व्यवस्था में दो नयी महाशक्तियों का अभ्युदय हुआ। ये महाशक्तियाँ थी – संयुक्त राज्य अमेंरिका और सोवियत संघ। इन्हीं दो महाशक्तियों के इर्द– गिर्द विश्व राजनीति के संकेन्द्रण के कारण द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् की विश्व राजनीतिक व्यवस्था को द्विध्रुवीय विश्व कहा गया। इस द्विध्रुवीय विश्व का एक ध्रुव संयुक्त राज्य अमेंरिका और उसकी पूजींवादी नीति के समर्थक देश थे वही दुसरे ध्रुव के प्रतिनिधि के तौर पर सोवियत संघ व इसकी समाजवादी नीति के समर्थक देशों को देखा गया। द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था के कारण विभिन्न अन्तरराष्ट्रीय सन्धियों, संगठनों, मंचों, विविध आर्थिक सहयोगप्रदाता निकायों में द्विध्रुवीय विश्वकालीन महाशक्तियों का ही वर्चस्व स्थापित रहा। वर्ष 1991 में सोवियत संघ के पतन के पश्चात विश्व व्यवस्था में संयुक्त राज्य अमेंरिका अपनी आर्थिक व तकनीकी उत्कृष्टता के कारण विश्व राजनीति का सर्वोच्य कार्यकर्ता बन गया जिसकी परणीति विश्व व्यवस्था के एकध्रुवीय स्वरूप में हुयी।

मुख्य शब्द : बहु–धुवीय, द्विध्रुवीय, साम्राज्यवाद–उपनिवेशवादी, वैश्विक सगंठन, पूँजीवादी, साम्यवादी।

प्रस्तावना

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात अनेक राष्ट्र साम्राज्यवाद–उपनिवेशवादी चंगुल से मुक्त हुए इन नवस्वाधीन राष्ट्र के सामने तत्कालीन द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था में दो विकल्प थे या तो वे किसी एक ध्रुव का दामन थाम लेवें व उसकी नीति के पोषक बनकर अपने विकास हेतु आवश्यक पर्याप्त आर्थिक सहायता व तकनीकी सहयोग ध्रुव के प्रतिनिधित्वकर्ता सें प्राप्त कर अपनी विकास की राह पर आगें बढें या फिर अपनी स्वतंत्र विदेश नीति को अपनायें व शीतयुद्धकालीन राजनीति से अपनें को बचाकर विकास हेतु आवश्यक तकनीकी व संसाधनों का विकास कर आगें बढ़ें। चुंकि विकास हेतु आवश्यक तकनीकी व संसाधनों का विकास शीघ्र व अकेले सम्भव नहीं था इसलिए तत्कालीन नवस्वाधीन देशों ने अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में अपने पक्ष को प्रभावी रूप से रखने तथा विकास हेतु आवश्यक तकनीकी व संसाधनों की सुनिश्चिता हेतु पारस्परिक सहयोग पर आधारित अनेक क्षेत्रीय व वैश्विक सगंठनों का गठन किया जिनमें प्रमुख है–1 ओपेक 2 गुटनिरपेक्ष आन्दोल न 3 आसियान 4 दक्षेस 5 BRICS

इन क्षेत्रीय सहयोग संगठनों के पारस्परिक सहयोग से नवस्वाधीन विकासशील देशों ने न केवल अपना विकास किया अपितु अनेक क्षेत्रों में उत्कृष्टता भी हासिल की है । सोवियत संघ के पतन के पश्चात् विश्व राजनीति एक प्रकार से द्विध्रुवीय से एकलध्रुवीय विश्व व्यवस्था में तब्दील हो गयी है और इस एकलध्रुवीय विश्व व्यवस्था में सयुंक्त राज्य अमेरिका सर्वोच्य शक्ति के रूप में स्थापित हुआ है। खाडी युद्ध से लेकर अफगानिस्तान युद्ध एंव इराक युद्ध तक पुरे विश्व में अमेरिका के प्रभुत्व को आसानी से देखा जा सकता है यथा– विभिन्न अन्तरराष्टीय संगठनों– संयुक्त राष्ट्रं संघ, ब्रेटनवुड संस्थायें–विश्व बैंक व

अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन में अमेरिका का विश्व व्यवस्था में प्रभुत्व उसके सैनिक–आर्थिक सामर्थ्य विज्ञान व तकनीकी में उत्कृष्टता आदि कारकों के कारण है। रहा जिस के परिणामस्वरूप अमेरिका का प्रभुत्व बना रहा लेकिन 2001 के बाद भारत रूस एवं चीन का प्रभुत्व बढ़ता जा रहा है।[1]

अध्ययन का उद्देश्य

बहु–ध्रुवीय विश्व के निर्माण में भारत चीन एवं रूस सम्बन्धों की क्या भूमिका है? एवं भविष्य में क्या हो सकती है? का अध्ययन किया किया गया।

विभिन्न पूर्वानुमानों का अनुमान है कि चीन जल्द ही अमेरिका को शीर्ष वैश्विक आर्थिक शक्ति के रूप में पार कर जाएगा क्योंकि अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा ने विश्व बैंक के विश्लेषण के आधार पर 2020 या 2030 तक क्रय शक्ति समानता का उपयोग करने की भविष्यवाणी की है, वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था में चीन की भूमिका 2005 में एक नए चरण में प्रवेश हुई जब यह पूंजी का एक नया निर्यातक बनना शुरू कर दिया। चीन का वर्तमान में विदेशी मुद्रा भंडार सबसे ज्यादा है। कुल मिलाकर, चीन ने पिछले दशक में विश्व बैंक की तुलना में उप–सहारा अफ्रीका को 12.5 अरब डॉलर ऋण दिया है; विश्व बैंक के 54.7 अरब डॉलर की तुलना में 2001 और 2010 के बीच 67.2 बिलियन विश्व के सबसे गरीब क्षेत्र में भी दे दिया गया था। संपत्ति के संदर्भ में दुनिया का सबसे बड़ा विकास संस्थान चीन विकास बैंक, विशेष रूप से प्राकृतिक संसाधन परियोजनाओं में चीनी उद्यमों के विदेशी विस्तार के पीछे अधिक संसाधन डाल रहा है। लैटिन अमेरिका में चीनी बैंकों के वित्तपोषण पर एक अध्ययन से पता चला है कि चीनी ऋणों की तुलना में विश्व ऋण ऋण की तुलना में अधिक कठोर मांग है।

प्रभावशाली आर्थिक आंकड़ों के बावजूद, यह सोचने के लिए भ्रामक है कि चीन के शीर्ष पर वृद्धि का मतलब है कि चीन जल्द ही दुनिया पर शासन करेगा जिस तरह से अमेरिका ने किया। अमेरिका अभी भी दुनिया की सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है और इसकी सेना अभी भी विश्व की सबसे शक्तिशाली है। हालांकि, यह अपने स्वयं के संकट, इसके बढ़ते राष्ट्रीय ऋण, इराक के प्रभाव और अफगान हमलों और चल रहे युद्धों के प्रभाव के रूप में उपयोग की जाने वाली एक मानवीय भूमिका को जोर देने में तेजी से मुश्किल लग रहा है, अपेक्षाकृत ''अनिच्छुक'' वैश्विक भूमिका राष्ट्रपति ट्रम्प। ब्रिक्स जैसे नई शक्तियों के उदय का मतलब यह नहीं है कि वे अमेरिका की पूर्व हेमोनिक भूमिका ग्रहण करने की मांग कर रहे हैं। यह अधिक संभावना है कि एक बहु–ध्रुवीय दुनिया का अर्थ है कि प्रमुख देशों का एक नया मिश्रण वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था को अमेरिका के साथ परिभाषित करेगा। इस बिंदु पर, उभरती अर्थव्यवस्थाएं अभी भी अमेरिका ओर पश्चिम में सहायक भूमिका निभा रही हैं। संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा बैंक (डब्ल्यूबी में गैर–अमेरिकी डालने के नवीनतम प्रयास के बावजूद) और व्यापार में निर्णय लेने के कई राजनीतिक क्षेत्र और निर्णय लेने की जगहों में पुरानी शक्तियां अभी भी अग्रणी हैं। [2]

चीन भी वर्तमान में बड़ी आंतरिक समस्याओं से जूझ रहा है। चीनी नेता लगातार चीन के आर्थिक एजेंडा की निरंतर सफलता के रूप में स्थिरता और सुधार की आवश्यकता को संबोधित करने के लिए सर्वोत्तम सूत्र खोजने के कार्य से जुड़े हुए हैं । लेकिन दोनों देशों में बड़ी संख्या में लोग आज भी गरीब हैं। एक और वास्तविकता पुरानी और नई शक्तियों के तकनीकी ज्ञान, सैन्य क्षमता और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में राजनीतिक प्रभाव के बीच विशाल अंतर है । वैश्विक मानव सुरक्षा सूचकांक में चीन और भारत 120 वें और 170 वें स्थान पर हैं। चीन के बाजार समाजवाद अपने आधुनिक रूप में एक हिंसक, निष्क्रिय और सकल अक्षम प्रणाली है जो बेहद अपर्याप्त और अस्थिर है । चीन का मॉडल केवल 21 वीं शताब्दी पूंजीवाद को दर्शाता है, जिसे कुछ लोगों द्वारा उच्च गति संचय, संसाधनों के बहुमत के संसाधनों और संसाधनों के प्रबंधन में उनकी आवाज़ के हाशिए के अधिग्रहण की विशेषता है।

बदलती वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था में चीन की भूमिका के बारे में वर्तमान विश्लेषण का अधिकांश हिस्सा नव उदार वैश्वीकरण के संदर्भ में चीन का पता लगाने में विफल रहता है। अन्य विकासशील देशों में चीन के बढ़ते पर्यावरणीय पदचिह्न के बारे में चल रही बहस के संदर्भ में, दो पहलुओं पर शायद ही कभी चर्चा की जाती हैः विकास की सीमाएं और कम कार्बन खपत के लिए एक ग्रह संक्रमण। शीर्ष पर चीन की वृद्धि प्राकृतिक संसाधनों के आयात और अन्य देशों में खपत के लिए अंतिम उत्पादों के मूल्यवर्धित इनपुट के रूप में। उनके पुनः निर्यात के माध्यम से हासिल की गई थी, ज्यादातर पश्चिम में। असल में, दुनिया के कारखाने के रूप में चीन का उदय विकसित दुनिया में अस्थिर खपत और उत्पादन पैटर्न को कायम रख रहा है। इस खेल में शामिल होने वाले चीनी टीएनसी की वास्तविकता भी है जिसने विकसित देशों से अप्रत्यक्ष शक्तियों को अंतर्राष्ट्रीय निगमों को दिया है।[3]

यदि चीन इतिहास के साम्राज्यवादी दृष्टिकोण को अस्वीकार करता है और पूर्व शाही युग की एक बहुपक्षीय दुनिया के निर्माण में विश्वास करता है, तो यह भारत रूस और अन्य विश्व शक्तियों के साथ काम करके ही कर सकता है। चीन अपने लिए जो रास्ता चुनता है वह यह निर्धारित करेगा कि अन्य राष्ट्र इसके उदय का जवाब कैसे देते हैं। वर्तमान में चीन द्वारा भारत को घेरने की रणनीति के परिणामस्वरूप भारत अमेरिका के अधिक नजदीक जा रहा है। जो चीन की महाशक्ति बनने में प्रमुख बाधा है। प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी ने चीन के दौरे के साथ व्यस्त कूटनीति के रूप में वर्ष को समाप्त किया। भारत के लिए कोई अन्य विपक्षीय संबंध अपने सबसे बड़े पड़ोसी के मुकाबले ज्यादा जटिल और चुनौतीपूर्ण नहीं है। सौभाग्य से एक बड़े पड़ोसी से निपटने में भारत के राजनीतिक नेतृत्व द्वारा की गई गलतियों को ज्यादातर गणराज्य के पहले दशक तक ही सीमित कर दिया गया था। आधे शताब्दी के लिए, भारत एक सीखने की अवस्था में रहा है। चीन से निपटने में जवाहरलाल नेहरू की फैसले की त्रुटियों ने दुविपक्षीय संबंधों पर एक लंबी छाया

डाली। तब से हर प्रधान मंत्री ने चीन से निपटने में सावधानीपूर्वक, शायद बहुत सावधानीपूर्वक चलना शुरू कर दिया है। पूर्व प्रधान मंत्री मनमोहन सिंह ने एक बार कहा था कि उन्होंने चीन पर नेहरू फाइलों के माध्यम से ध्यान से पढ़ने के लिए काफी समय समर्पित किया है ताकि उनके पूर्ववर्ती की गलतियों को दोहराना न पड़े। मुझे लगता है कि हर प्रधान मंत्री ने ऐसा किया होगा और श्री मोदी ने भी ऐसा किया होगा।[4]

21 वीं शताब्दी अकेले चीन की शताब्दी नहीं होगी और न ही यह अमेरिका की रहेगी। भूगर्भीय और भू–आर्थिक स्थितियों ने ब्रिटेन को 19वीं शताब्दी में 'महान' बनने के लिए सक्षम किया और अपने लिए सदी का दावा किया, एक वैश्विक साम्राज्य का निर्माण किया, और जिसने अमेरिका को 20 वीं शताब्दी की प्रमुख विश्व शक्ति के रूप में उभरने में सक्षम बनाया चीन के लिए मौजूद नहीं है या आज कोई और। ब्रिटिश और अमेरिकी साम्राज्यों की ''एकध्रुवीय" दुनिया एक ऐतिहासिक विचलन था। यूरोपीय छात्रवृत्ति ने इतिहास में सभी महान शक्तियों को गलत तरीके से ''वैश्विक शक्तियों" के रूप में देखा। उनमें से कई का वैश्विक क्षण अल्पकालिक था। सबसे अच्छा वे सभी महाद्वीपीय शक्तियां थीं। बहुतायत या शक्ति और समृद्धि के बहुसंख्यक फैलाव दुनिया की सामान्य स्थिति को परिभाषित करता है।

यदि चीन भारत–प्रशांत क्षेत्र की प्रमुख समुद्री शक्ति और यूरेशियाई भूमि द्रव्यमान की मुख्य भूमि शक्ति बनने में सफल होता है, तो यह निश्चित रूप से 21 वीं शताब्दी की प्रमुख दुनिया शक्ति के रूप में उभरा होगा।[5] तिब्बत पर चीन का नियंत्रण और यूरेशियन भूमि द्रव्यमान पर एक तरफ, और दक्षिण चीन सागर और भारतप्रशांत क्षेत्र पर इसका नियंत्रण एक दूसरे पर एकध्रुवीय प्रभुत्व के लिए केंद्र बन गया है। लेकिन यह अपरिहार्य नहीं है। यदि चीन अपने पश्चिम में भूमि और अपने पूर्व और दक्षिण में पानी पर हावी होना चाहता है और इस तरह शताब्दी के हथियार के रूप में उभरा है, तो यह रूस समेत सभी अन्य प्रमुख शक्तियों को एक साथ आने और इस तरह के निर्माण का विरोध करने के लिए मजबूर करेगा। दूसरी तरफ, यदि चीन इतिहास के इस तरह के साम्राज्यवादी विचार को अस्वीकार करता है, और वास्तव में पूर्व शाही युग की एक बहुपक्षीय दुनिया के निर्माण में विश्वास करता है, तो यह भारत और यूरोप और एशिया की अन्य शक्तियों के साथ काम करके ही कर सकता है। चीन अपने लिए जो रास्ता चुनता है वह यह निर्धारित करेगा कि अन्य राष्ट्र इसके उदय का जवाब कैसे देते हैं। हालांकि, चीन में कई आंतरिक मुद्दे हैं जो इसे अमेरिका की सर्वोच्चता को प्रभावी ढंग से चुनौती देने से रोक सकते हैं। हाल के वर्षों में इसकी वृद्धि धीमी हो गई है, इसके कार्यबल बल 2050 तक 17 प्रतिशत तक गिरने की भविष्यवाणी कर रहे हैं, इसकी उम्र बढ़ने वाली आबादी के कारण वन–चाइल्ड पॉलिसी के प्रभाव के साथ–साथ। चीन की सरकार की पुलिस–राज्य प्रकृति के कारण भी नागरिकों में असंतोष है, जिसमें शी जिन जिन पिंग की हालिया अवधि सीमा को हटाने और मुख्य भूमि चीन में भारी इंटरनेट सेंसरशिप पर नागरिक असंतोष है। चीनी युवाओं में उच्च आत्महत्या दरें हैं और सबसे अमीर और सबसे गरीब नागरिकों के बीच असमानता बढ़ रही है, खासकर शहरी बनाम ग्रामीण आबादी के विपरीत। ये समस्याएं उदारवादी विचारक फुकोयामा के सिद्धांत का पालन करती हैं कि दुनिया अब 'पूंजीवादी उदार लोकतंत्र' में प्रवेश कर रही है, और राज्य केवल तभी सफल हो सकते हैं जब वे शासन की इस शैली का पालन करें। चीन पूंजीवादी अर्थव्यवस्था होने के नाते एक कम्युनिस्ट सरकार होने के कारण, यह उदार लोकतंत्र होने के कारण अमेरिका को उचित रूप से खतरे में डाल सकता है क्योंकि अमेरिका का विचारधारात्मक लाभ है।[6]

निष्कर्ष

बहुसंख्यक प्रणाली में प्रवेश करने के रूप में वैश्विक आदेश को देखा जा सकता है, एक और तरीका भारत, रूस और यूरोपीय संघ जैसे उभरती वैश्विक शक्तियों के उदय के कारण है, जिससे वैश्विक आदेश पूर्व–डब्ल्यूडब्ल्यूआई युग की तरह अधिक से अधिक दिखाई देता है, लेकिन decolonization के प्रभाव, जिसका अर्थ है कि अधिक राज्य शक्तियों के रूप में उभरा सकते हैं। भारत में कर्मियों की ताकत, पांचवां सबसे बड़ा रक्षा बजट और सातवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था, कनाडा को छोड़कर भारत की तीसरी सबसे बड़ी सेना है। ट्रम्प ने हाल ही में कहा है कि अमेरिका–भारत संबंधों ने 'कभी चमकदार नहीं देखा' है, और अमेरिका चीन के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए क्षेत्रीय शक्ति के रूप में भारत को बढ़ावा देने में निहित रुचि दिखा रहा है। रूस के सैन्य ताकत के शो ने वैश्विक मामलों पर काफी प्रभाव डाला है पुतिन के असद के समर्थन के कारण, सीरिया संघर्ष का समाधान करने में असमर्थ है।

रूस के 2014 क्रेमिया के कब्जे और लंबवत परमाणु प्रसार के हालिया प्रदर्शन भी सैन्य रूप से इसकी प्रमुखता दिखाता है। यूरोपीय संघ ने विशेष रूप से जर्मनी के संबंध में काफी नरम शक्ति का प्रदर्शन किया है, और 1 मिलियन शरणार्थियों की जर्मनी की स्वीकृति के माध्यम से खुद को 'तर्कसंगत' और 'करुणामय' अमेरिका के रूप में पेश करने में कामयाब रहा है।[7]

हालांकि, इन सभी राज्यों के वैश्विक मामलों पर प्रभाव पड़ता है, लेकिन अमेरिका के वैश्विक मामलों पर कोई भी नियंत्रण नहीं रखता है, जिसका अर्थ है कि वे अभी भी 'महान शक्तियां' हैं और 'महाशक्ति' नहीं हैं। उनमें से सभी में आंतरिक मुद्दे और विभाजन हैं जिसका अर्थ है कि वे प्रभावी रूप से अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा करने और बहुपक्षीय वैश्विक आदेश बनाने में असमर्थ हैं। जबकि भारत में काफी सैन्य है और आर्थिक रूप से बढ़ी है, 270 मिलियन नागरिक अभी भी गरीबी में रहते हैं, और इसके बुनियादी ढांचे में बड़े निवेश की जरूरत है, अनुमान है कि भारत के वित्त मंत्री द्वारा 1.3 ट्रिलियन डॉलर का अनुमान लगाया गया है। यह अंतर सरकारी संस्थानों में भी कम नहीं है – यह जी 8 का सदस्य नहीं है, और संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद का स्थायी सदस्य नहीं है। रूस के सैन्य ताकत के शो का मतलब बहुत कम है यदि उसके पास खुद को बनाए रखने के लिए स्थिर अर्थव्यवस्था नहीं है, जो रूस के क्रेमिया के कब्जे के बाद लगाए गए प्रतिबंधों

के कारण है, जो रूस के विदेशी बाजारों और ऋणों तक पहुंच को रोकता है।[8]

लेकिन इसमें नहीं है। रूस से यूक्रेन से पीछे हटने से इंकार कर दिया गया है, क्योंकि इसकी अर्थव्यवस्था गंभीर रूप से डूब गई है, रूस की अचूकता को वैश्विक अभिनेता के रूप में दिखाती है, और इसका मतलब है कि यह अमेरिकी सर्वोच्चता के लिए एक वैध खतरा नहीं है। यूरोपीय संघ, जबकि जर्मनी जैसी मजबूत वैश्विक शक्तियॉ शामिल हैं, इसकी आंतरिक संरचना के कारण इटली और ग्रीस जैसे अर्थव्यवस्थाओं में असफल होने से भी नीचे लाया गया है। यूरोपीय संघ के यूरोज़ोन का अर्थ है कि ईयू केवल अपने सबसे कमजोर राज्यों के रूप में मजबूत है, और हाल ही में वित्तीय संकट और पूर्व सोवियत ब्लॉक राज्यों को विस्तारित करने के विस्तार के कारण, जल्द ही सभी राज्यों से ऊपर की वृद्धि होने की संभावना नहीं है। यूरोपीय संघ से यूके के बाहर निकलने के अनुसार, पोलिश सरकार के एक स्वतंत्र न्यायपालिका के अर्द्ध हटाने और जर्मनी और फ्रांस में दूर–दराज के राजनीतिक दलों के उदय के अनुसार, यह राष्ट्रवाद और लोकप्रियता की ओर हालिया कदम से भी प्रभावित है। रक्षात्मक यथार्थवादी केनेथ वाल्टज़ का कहना है कि यूरोपीय संघ की 'संरचनात्मक समस्याओं और आंतरिक विभाजन' के कारण निराशावादी संभावनाएं हैं, और यह कि यूरोज़ोन के साथ अलग अर्थव्यवस्थाओं के साथ मिलकर यह एक 'ग़लत–गलती' थी। इन सभी आंतरिक मुद्दों के कारण, इनमें से कोई भी राज्य आर्थिक रूप से अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम नहीं है, और इस प्रकार दुनिया को बहुपक्षीय नहीं कहा जा सकता है। अंत वैश्विक विफलता बहु–ध्रुवीय विश्व नहीं है, भले ही अमेरिकी विफलताओं और इसकी प्रतिष्ठा कमजोर हो। तथ्य यह है कि अमेरिका में आर्थिक, सैन्य और राजनीतिक सर्वोच्चता है, जिसने इसे आर्थिक वैश्विक शासन संस्थानों के माध्यम से लागू किया है। इसका मतलब है कि अमेरिका के साथ प्रतिस्पर्धा करने के लिए बढ़ते राज्यों के लिए यह संरचनात्मक रूप से बहुत मुश्किल है और भारत चीन एवं रूस को प्रतिस्पर्धी शक्ति के रूप में देखा जा सकता है, और इस प्रकार विश्व व्यवस्था को बहु–ध्रुवीय के रूप में देखा जा सकता है, फिर भी इसकी वृद्धि केवल भविष्यवाणी की जाती है,

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *बी0आर0नन्दा (सम्पादित), इंडियन फारेन पॉलिसी : द नेहरू ईयर्स, (रेडिएन्ट पब्लिशर्स, नई दिल्ली,1990)पृ0 17*
2. *डी0 एन0 वर्मा; अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (ज्ञानदा प्रकाशन (पी0ऐंड डी0), नई दिल्ली, 2000)*
3. *जे0एन0दीक्षितः भारतीय विदेश नीति, (प्रभात प्रकाशनदिल्ली, 1999) पृ. 109*
4. *जैन बीएम : अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी 2018 पृ. 608*
5. *के0पी0मिश्रा (सम्पादित); जनताज फारेन पालिसी, (विकास पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1979)पृ. 27–28*
6. *के0पी0 मिश्रा (सम्पादित); फारेन पालिसी आफ इंडिया : ए बुक ऑफ रीडिंग्स (थामसन प्रेस, नई दिल्ली, 1977), पृ. 161*
7. *इण्डिया टूडे ,2016*
8. *प्रतियोगिता दर्पण 2018*